धूमिल के काव्य में जनसरोकार

ज्योति,

शोधार्थिनी,
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,
मोहान रोड, लखनऊ

शोध सारांश

धूमिल की कविता के केन्द्र में मनुष्य है, उनकी कविताएँ प्रत्येक मानीवय पहलु को टटोलती है धूमिल जंगल जनतंत्र और क्रांति के परम्परागत 'मिथ को तोड़ते है उनकी कविताएँ जीवन की समस्याओं से केवल साक्षात्कार ही नही करती अपितु जूझती भी हैं जिसमें रोटी और भूख, शहर और गाँव, जनतंत्र और समाजवाद, संसद और सड़क है जो उनके संघर्षशील चेतन पक्ष को सामने रखती है। धूमिल अपनी कविताओं में मानवीय जीवन के विविध संदर्भो की सटीक अभिव्यक्ति करते है।

प्रगतिशील विचारधारा को धारण करने वाले समकालीन कवियों में धूमिल का नाम विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। सामाजिक यथार्थ का जितना तीखापान धूमिल के काव्य में मिलता है उतना किसी अन्य समकालीन कवि में नहीं हिन्दी साहित्य में धूमिल का उदय धूमकेतु की तरफ होता है जिसमें अग्नि भी है, धुआँ भी। धुआँ आधुनिकता है और अग्नि प्रगतिशील चेतना है धूमिल की उर्जा, विक्षोभ, आक्रमकता भाषिक नवोन्मेष देखकर निराला की याद आ जाती है पर धूमिल का एक छोर आधुनिकता से बँधा था तो दूसरा छोर अराजकता से।

धूमिल की कविता के केन्द्र में मनुष्य है, उनकी कविताएँ प्रत्येक मानीवय पहलु को टटोलती है धूमिल जंगल जनतंत्र और क्रांति के परम्परागत 'मिथ को तोड़ते है उनकी कविताएँ जीवन की समस्याओं से केवल साक्षात्कार ही नही करती अपितु जूझती भी हैं जिसमें रोटी और भूख, शहर और गाँव, जनतंत्र और समाजवाद, संसद और सड़क है जो उनके संघर्षशील चेतन पक्ष को सामने रखती है। धूमिल अपनी कविताओं में मानवीय जीवन के विविध संदर्भो की सटीक अभिव्यक्ति करते है। डॉ0 गणेश तुलसीराम अष्टेकर 'कटघरे का कवि धूमिल' में 'धूमिल की कविता का केन्द्रीय तत्व उनके यथार्थ–बोध को बताया है उनके शब्दो में' **''अव्यवस्था के कटघरे में कभी अभियुक्त, कभी अभियोक्ता और कभी गवाह की हैसियत से खड़ा होकर अपने समकालीन समाज एवं राजनीति के कुरूप पक्ष को बेनकाब करने वाले हलफिया बयान देने का साहसी काम स्व0 धूमिल ने किया है।''**[1]

धूमिल की पहली चिन्ता 'आम आदमी था'। उस 'आम आदमी' की चिन्ता उनके, इन शब्दों में अभिव्यक्ति होती है– ''विभिन्न गुटों वादों, भाषाओं और संप्रदायों में विभाजित देश का एक बड़ा हिस्सा भूख और भाषा के संकट से गुजर रहा है' आर्थिक दबाव के नीचे पिसकर उसकी शिनाख्त खत्म हो गई है वह कहीं शरीक नहीं है ऐसा नहीं कि आज का आदमी इस दुहरे संकट से जूझ नही रहा है। वह लड़ रहा है

किन्तु अकेले की लड़ाई ने उसे असहाय बना दिया है ऐसी स्थिति में वह या तो तटस्थ होकर रह गया है या फिर निर्मम। आदमी और आदमी के बीच सारे सम्बन्ध टूट रहे है। इस तरह न केवल आर्थिक असन्तुलन बढ़ा है बल्कि कहीं बहुत गहरे उसकी भाषा भी इस साजिश का शिकार हुई है।'' [2]

धूमिल ने जिस आमआदमी को अपने काव्य में स्थान दिया वह हर तरह से शोषित, लुटा–पिटा, थका–हारा और हताश है। वह व्यक्ति अपने अस्तित्व से बेखबर है, जो पूंजीवादी व्यवस्था के षडयंत्र का मोहरा बना हुआ है, जो सामंती दासता के चंगुल में फंसा हुआ है। उसकी सारी इच्छाएँ, आकांक्षाएँ और आशाएँ या तो व्यवस्था ने समाप्त कर दी है या उसके किसी भाग ने। जो प्रत्येक क्षेत्र में प्रताड़ित और हारा हुआ है, 'जहाँ जीवन अब भी तिरस्कृत है। इसलिए धूमिल उसमें चेतना पैदा करते है और कहते हैं– 'मत भूलो तुम्हारा हर आंसू अपराधियों के लिए चोट का दूसरा दरवाजा खोलता है' अतः 'अब आंसू बहाने से काम नहीं चलेगा क्योंकि अब तो चारो ओर हवाएँ गर्म है, इन यातनाओं के लिखाफ। इसलिए कवि कहता है' हवाएँ खौलती है– तेजाब की तरह, हर जुबान पर जलता है, एक मारक शब्द–क्रांति।

धूमिल जनता की भाषा में दीन–दीनों, वंचितो, पीड़ितो इत्यादि के दुख दर्द का सजीव चित्रण करते है और उनकी आवाज हुकूमत तक पहुँचाने की हर मुमकिन कोशिश करते है। भले ही हुकूमत गूंगी – बहरी को तरफ मूक दर्शक बनी देखती रहे। उनके **'शहर में सूर्यास्त', 'मकान एवं आदमी' 'शहर का व्याकरण', 'नगर कथा', 'मोचीराम', 'पटकथा', 'रोटी और संसद', 'मुनासिब कार्यवाही', प्रौढ़ शिक्षा', लोकतंत्र ताजा खबर, 'अकाल दर्शन', 'किस्सा जनतंत्र', 'नक्सलवाड़ी'** ऐसी कविताएँ है जिसमें धूमिल आम आदमी की जिंदगी की सच्चाई को पेश करते हैं।

आजादी के बाद सालों गुजरने पर आम आदमी के जीवन में कोई परिवर्तन नही हुआ, सारा देश मोहभंग के दुख से पीड़ित हुआ है। इस पीड़ा को धूमिल ने **'संसद से सड़क तक', 'कल सुनना मुझे'** और **'सुदामा पांडे का प्रजांतत्र'** इन तीन कविता संग्रहो की कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है उनकी कविता में पीड़ा और आक्रोश देखा जा रहा है। आम आदमी का आक्रोश कवि की वाणी में घुलता है और शब्द रूप धारण कर कविताओं के माध्यम से कागजों पर उतरता है बिना किसी अलंकार, साज–सज्जा के सीधी सरल और सपाट बयानी आदमी की पीड़ाओं को अभिव्यक्ति करती है। उनके ही शब्दों में–

''आज मैं तुम्हे वह सत्य बतलाता हूँ
जिसके आगे हर सच्चाई
छोटी है। इस दुनिया में
भूखे आदमी का सबसे बड़ा तर्क रोटी है'' [3]

धूमिल अपने जीवानुभवों से उस पीड़ा से वाकिफ है– जिसमें–

''लोग बिलबिला रहे है
पत्ते और छाल
खा रहे है'' [4]

धूमिल की कविताएँ पाठक के मन में करूण रस का संचार ही नहीं करती बल्कि ऐसी व्यवस्था का विरोध करने को तत्पर करती है जिसमें जनता का एक बड़ा हिस्सा भूख एवं दरिद्रता का शिकार है एवं चन्द चुने हुए लोग उनके श्रम का लाभ लूटने में लगे रहते हैं। धूमिल, उस तंत्र की पहचान करते हैं एवं उसके विरोध में खड़े होने के लिए प्रेरित करते हैं, वे जनता को बतलाते है, कि वह राजनीतिक आजादी के खोखले नारों और गांधीवाद के नाम पर चलाई जाने वाली लूट से सतर्क रहे–

''उस मुहावरे को समझ गया हूँ
जो आजादी के नाम पर चल रहा है
जिससे न भूख मिट रही है, न मौसम
बदल रहा है''। [5]

वे इस आर्थिक शोषण के लाभार्थी को बेनकाब करते हुए लिखते है कि– वह उस 'मीडिल मैन' को पहचाने –

''जो न रोटी बेलता है
न रोटी खाता है
वह सिर्फ रोटी से खेलता है''। [6]

रोटियों से खेलने वाले इन जनतंत्र के पहलुओं का विरोध 'धूमिल' की कविता में सर्वत्र देखा जा सकता है साथ ही साथ उनकी कविता जनता का आर्थिक शोषण कर रहे व्यवसायी वर्ग पर भी चोट करती है। इस दृष्टि से 'मोचीराम' कविता महत्वपूर्ण कविता है। 'मोचीराम' धूमिल के 'वर्ग–चिन्तन' का सर्वश्रेष्ठ प्रतिबिम्ब है इस कविता में ऐसे वर्गों का विरोध साफ तौर पर दिखता है–

''एक जूता और है जिसमें पैर को
'लाँघ कर' एक आदमी निकलता है
सैर को
न वह अकलमंद है
न वक्त का पाबन्द है
उसकी आखों में लालच है
हाथों में घड़ी है
उसे कहीं जाना नहीं है
मगर चेहरे पर
बड़ी हड–बड़ी है
वह कोई बनिया है
या बिसाती है [7]

धूमिल जानते हैं कि राजनेता लूट–खसोट में लगे हैं एवं अर्थतंत्र पर बनियों– बिसातियों का कब्जा है। परन्तु उन्हें लगता है कि शोषण के लिए खुद जनता भी कम जिम्मेदार नहीं है अतएव उनकी कविताओं में आम जनता की यथास्थिति वादी मनोवृत्ति का भी विरोध दिखाई देता है 'धूमिल' की कविताओं में जनता की यथास्थितिवादी मनोवृत्ति के प्रति व्यंग्य का भाव वास्तव में विरोध का ही स्वर है–

''कोई किसी से कुछ नहीं पूँछता
हर आदमी चुपचाप
नीद और कीर्तन के बीच का जागरण
तय करता है यह सोचते हुए कि आदमी
कुछ नहीं करता
जो कुछ करता है समय करता है
मेरे गाँव में हर रोज ऐसा ही होता है'' [8]

'धूमिल' के विरोध एवं संघर्ष का मुख्य प्रतिपक्ष राजनीतिक व्यवस्था है उनकी अधिकांश कविताओं का केन्द्रीय कथ्य या तो राजनीतिक व्यवस्था में आई गिरावट को व्यंजित करता है। उनकी 'भूख' एवं 'दरिद्रता' विषयक कविताओं में कभी कहीं न कहीं राजनीतिक संवेदना समाहित हैं कुछेक के आत्मापरक कविताओं को छोड़ दे तो धूमिल की लगभग सभी कविताएँ किसी न किसी रूप में राजनीतिक तंत्र से टकराती हैं–

'यहाँ न कोई प्रजा है
न कोई तन्त्र है
ये आदमी के खिलाफ
आदमी का खुला सा षड़यन्त्र है' [9]

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त राजनीति ने शहर और देहात के जीवन पर अपना दुष्प्रभाव छोड़ा है राजनीति संसद से होकर सड़क तक आ गई

संसद को सड़क पर लाने वाले वे पहले कवि थे, धूमिल अपने समय की राजनीति से क्षुब्ध थे जिसे बुलन्द रखने के लिए अनेक देश भक्तों ने प्राण त्यागे जो हमारी स्वाधीनता का प्रतिक बने किन्तु वह आस्था भी डगमगा जाती है–

''बीस साल बाद

मैं अपने आप से एक सवाल करता हूँ–

जानवर बनने के लिए कितने सब्र की जरूरत होती है?

और बिना किसी उत्तर के चुपचाप

आगे बढ़ जाता हूँ'' [10]

तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था में इस जनतंत्र का प्रतिनिधि संसद को मान जाता है 'धूमिल' की कविताओं में इस प्रतिनिधि व्यवस्था– 'संसद' का बार–बार उल्लेख अनायास नहीं है। संसद उनके लिए उस व्यवस्था को बेनकाब करने वाला शब्द है– जिसे वे आम आदमी के खिलाफ षड़यंत्र का आधार मानते है तत्कालीन संसद उन्हीं के शब्दों में

''मुझे कहा गया कि संसद

देश की धड़कन को

प्रतिबिम्बित करने वाला दर्पण है

जनता को जनता के विचारों का

नैतिक समर्पण है,

लेकिन क्या यह सच है?

या यह सच है कि

अपने यहाँ संसद

तेली की वह धानी

जिसमें आधा तेल है

और आधा पानी है [11]

'आधा तेल–आधा पानी' वाली इस संसद की व्यवस्था–कथा का व्यापक विश्लेषण 'पटकथा' कविता में मिलता है वास्तव में 'पटकथा' धूमिल की सातवें दशक की काव्य–साधना एवं राजनीतिक भाव–बोध का निचोड़ है एक साँस में लिखी गई यह कविता प्रारम्भ होती है आजादी के उत्साह से एवं खत्म होती है संशय, चीनी आक्रमण से बेपर्दा हुई राजनीति एवं सारी दुर्व्यस्था को बर्दास्त करती जनता से। 'धूमिल' को जनता पर गुस्सा आता है वे उस जनतंत्र के रेशे–रेशे को अलग करते हुए जनता को उसकी असलियत दिखाते है। 'एक भेड़ है/जो दूसरों की ठंड के लिए/अपनी पीठ पर ऊन की फसल ढो रही है।'' [12]

धूमिल की कविताओं की व्याख्या करते हुए डॉ0 नन्दकिशोर नवल लिखते हैं– ''धूमिल व्यवस्था को बदलना चाहते है लेकिन उसके लिए न अपने को तैयार पाते न जनता को स्वभावतः उनका गुस्सा दोनो पर है। उस औरत की बगल में लेटकर कविता में उन्होंने कहा है कि मेरे भीतर एक कायर दिमाग है, जो मेरी रक्षा करता है जनता पर अपना गुस्सा उन्होंने अनेक कविताओं में उतारा है, जो इस बात का सबूत है कि पुराने प्रगतिशील कवियों की तरह उन्होंने जन–पूजा नहीं की।'' [13]

इस प्रकार यह कह सकते है कि क्रान्ति, ओज और पौरूष 'धूमिल' की कविता के पर्याय है वे कबीर की तरह चुनौति देने वाले है। 'धूमिल' परिवर्तनकामी है वे बदलाव चाहते है– ऐसी व्यवस्था जिसमें आदमी के आदमी होने पर सवालिया निशान लग रहा है– देश की जनता, का एक बड़ा हिस्सा भूख–गरीबी एवं यथास्थितिवादी मनोवृत्ति के जाल में फँसा है। उसे वे बदलना चाहते है। इसके लिए वे सबका विरोध करते है– सबसे संघर्ष करते है जो उनके बदलाव में बाधक है चाहे वह देश की राजनीति का तत्कालीन स्वरूप हो या देश की तत्कालीन

समाज एवं अर्थव्यवस्था, चाहे वह गाँवों की 'उब' हो या शहरों की ''वीर्यहीनता'' सबका विरोध करते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1- 'कटघरे का कवि धूमिल' – डॉ0 गणेश तुलसीराम अष्टेकर पृ0–14

2- कल सुनना मुझे 'सुदामा पाण्डेय' धूमिल– पृष्ठ–8

3- संसद से सड़क तक 'अकाल दर्शन', धूमिल पृष्ठ – 34

4- वही पृष्ठ–63

5- सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र– 'धूमिल संयुक्त मोर्चा' धूमिल–पृष्ठ–93

6- वही पृष्ठ– 82

7- संसद से सड़क तक 'मोची राम' धूमिल–पृष्ठ–39

8- कल सुनना मुझे 'गाँव में कीर्तन' धूमिल–पृष्ठ–39

9- सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र धूमिल– पृष्ठ–42

10- संसद से सड़क तक 'बीस साल बाद' धूमिल–पृष्ठ–9

11- संसद से सड़क तक– 'पटकथा' धूमिल–पृष्ठ–127

12- वही–पृष्ठ–104

13- समकालीन काव्य यात्रा 'नन्द किशोर नवल' पृष्ठ–276

Copyright © 2017, Jyoti. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.